गीति

शब्द, लय, पद और तालबद्ध रचना को 'गीति' कहते है। गीति में स्वर और लय के साथ–साथ शब्दों का प्रयोग अनिवार्य है। ''संगीत रत्नाकर'' के अनुसार, वर्ण, पद तथा लय से संयुक्त गान–क्रिया 'गीति' कहलाती है–

''वर्णाद्यलंकृता गान–क्रिया पदलयान्विता।

गीतिरित्युच्ते सा च बुधैरुक्ता चतुर्विधा।।''

दुसरे शब्दों में, दस लक्षणयुक्त वह रचना जो पद और लय से आबद्ध हो, वह गीति है। 'गीति' का तात्पर्य है – 'गीत की शैली' अर्थात् स्वरों के प्रयुक्त का विशिष्ट प्रकार।

गीति के भेद

साधारणतः गीति के दो भेद कहे गए है–

(क) स्वराश्रित गीति

(ख) पदाश्रित गीति

- स्वराश्रित गीति : इस गीति में पद की अपेक्षा स्वर को अधिक महत्व दिया जाता है, इसलिए इसको स्वराश्रित गीति कहते है। इसके पाँच भेद प्रचलित थे, जो इस प्रकार है–
  (1) शुद्धा गीति
  (2) भिन्ना गीति
  (3) गौड़ी गीति
  (4) वेसरा गीति
  (5) साधारणी गीति

  (1) शुद्धा गीति – इस गीति में वक्र स्वरों से रहित ललित स्वरों का प्रयोग किया जाता था, अतः ये शुद्धा गीति कहलाई। अर्थात् जिस गायकी में मूर्च्छना व ग़मकादि मोहक गुणों का प्रयोग नहीं होता, उसे शुद्धा गीति कहते है।
  शुद्धा गीति लालित्य एवं कोमलता के लिए प्रसिद्ध थी।

  (2) भिन्ना गीति – भिन्ना वह गीति है जिसमें स्वरों का वक्र प्रयोग सुक्ष्म एवं मधुर ग़मकों के साथ होता है। अर्थात् जिसमें लालित्यपूर्ण तत्वों का प्रयोग होता है, वह भिन्ना गीति कहलाती है।
  भिन्ना गीति अपनी सुक्ष्मता एवं कलात्मकता के लिए प्रसिद्ध थी।

  (3) गौड़ी गीति – वह गायन शैली जिसमें मंद्र, मध्य और तार – तीनों सप्तकों में गंभीर ग़मकों का प्रयोग हो और ओहाटी से युक्त ललित स्वरों का प्रयोग हो, उसे गौड़ी गीति कहते है।

(ओहाटी : 'ओहाटी' शब्द ओ, ह एवं अटी शब्द से मिलकर बना है। 'ओहाटी' एक पारिभाषिक शब्द है, जिसका आशाय है – ठोड़ी को हृदय से छुआकर मंद्र स्थान में कम्पित, मृदु स्वरों का प्रयोग करने से 'हौ' जैसी सुनाई देनेवाली ध्वनि। अर्थात् स्वरों में ग़मक उत्पन्न करने के लिए ओम्कार और हकार का प्रयोग ही 'ओहाटी' कहलाता है।)

(4) वेसरा गीति – स्थायी, आरोही, अवरोही और संचारी–इन वर्णो में अत्यन्त रंजकता के साथ वेग से अर्थात् द्रुत गति में स्वरों का उच्चारण करने से उत्पन्न गीति को वेसरा गीति कहते है। राग की आश्रयभूत होने के कारण इस को 'राग गीति' भी कहा गया है।

(5) साधारणी गीति – इस गीति में अन्य चारों गीतियों की सभी विशिष्टताएँ निहित है। पंडित सारंगदेव के अनुसार,

''चतुर्गीतिगतं लक्षमाश्रिता साधारणी मता''

अर्थात् शुद्धा, भिन्ना, गौड़ी और वेसरा – इन चार गीति प्रकारों की विशेषताओं से युक्त गीति को साधारणी गीति कहते है। आज की ख्याल गायकी और कुछ नहीं, बल्कि साधारणी गीति का स्वभाविक विकास मात्र है, जिसमें सभी गाायन शैलीयों के अनुपम विन्यास का प्रयोग होता है।

- <u>पदाश्रित गीति</u> : इस गीति में स्वर की अपेक्षा शब्द अर्थात् पद को अधिक महत्व दिया जाता है, इसलिए इसे पदाश्रित गीति कहते है। इस गीति के चार भेद माने गए है, जो इस प्रकार है–
  (1) मागधी
  (2) अर्द्धमागधी
  (3) संभाविता
  (4) पृथुला

  (1) मागधी – जिस गीति का प्रथम चरण विलंबित लय में, दुसरा चरण मध्य लय में तथा तीसरा चरण द्रुत लय में गाया जाए, उसे मागधी गीति कहते है।

  (2) अर्द्धमागधी – इस गीति में देवपद का उच्चारण किया जाता था।

  (3) संभाविता – जिस गीति में दीर्घ अक्षर अधिक पाए जाते थे, किन्तु पद संक्षिप्त होते थे, उसे संभाविता गीति कहते थे।

  (4) पृथुला – जिस गीति में हर्स्व अक्षर अधिक पाए जाते थे, उसे पृथुला गीति कहते थे।

अन्य विद्वानों के अनुसार, गीति के दो भेद माने गए है –

(क) वहीर/नीर गीति

(ख) ध्रुवा गीति

- वहीर/नीर गीति : जिस गीति में निरर्थक पदों का प्रयोग किया जाता था, उसे वहीर गीति या नीर गीति कहते थे।
- ध्रुवा गीति : नियत पद समूह अर्थात् सकारात्मक पद से निबद्ध गीति को ध्रुवा गीति कहा जाता है। प्राचीन काल में ध्रुवा गीति के निम्न प्रकार प्रचलित थे–
  (1) प्रावेशिकी
  (2) न्यैस–क्रैमिकी
  (3) आछेपिकी
  (4) प्रसादकी
  (5) अंतरा

  (1) प्रावेशिकी – जब नाटक के प्रथम अंग का शुभारंभ होता था, तो उस समय रंग–मंच पर प्रवेश करते समय जब पात्र भावों और पदों का गायन करता था, तो उसे प्रावेशिकी ध्रुवा गीति कहते थे।

  (2) न्यैस–क्रैमिकी – नाटक के अंग की समाप्ति में जब पात्र अपना अभिनय समाप्त कर जाने लगता था, तो उस समय पात्र जो गीत गाता था, उसे न्यैस–क्रैमिकी ध्रुवा गीति कहते थे।

  (3) आछेपिकी – नाट्य तत्व को जानने वाला पात्र जब नाट्य में क्रम का उल्लंघन करते हुए गीत गाता था, तो उस गीत को आछेपिकी ध्रुवा गीति कहते थे।

  (4) प्रसादकी – जिस गीति में किसी रस की उत्पत्ति होने पर पुनः उस रसावस्था को परिवर्त्तित करके गान करने से आनन्द की अनुभूति होती थी, ऐसे गीति को प्रसादकी ध्रुवा गीति कहते थे।

  (5) अंतरा – जब कोई पात्र दुःख या क्रोध से विश्रान्त हो जाता था, तो उसके दोषों को छुपाने के लिए जो गीत गाया जाता था, उसे अंतरा ध्रुवा गीति कहते थे।

Ruma Chakraborty

Vocal Instructor,

PG Department of Music,

Patna University